[2018] 13 S.C.R. 1093

कामिल

विरुद्ध

उत्तर प्रदेश राज्य

(दाण्डिक अपील क्रमांक 1568/2015)

31 अक्टूबर, 2018

(न्यायमूर्ति आर**.** भानुमति एवं इंदिरा बनर्जी **)**

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 464 - आरोप निर्धारण में चूक या आरोप का अभाव या आरोप में त्रुटि का प्रभाव - धारा 302/34 भा.द.सं. के अंतर्गत अभियुक्त की दोषसिद्धि - यद्यपि धारा 302 के अंतर्गत आरोप निर्धारण में चूक हुई, किन्तु अभियुक्त के विरूद्ध प्रस्तुत आरोप पत्र सारतः स्पष्ट रूप से दर्शित करता है कि अभियुक्त पर उक्त अपराध के लिए आरोप लगाया गया है - धारा 302 के अंतर्गत दोषसिद्धि की पोषणीयता - अभिनिर्धारितः बिना किसी आरोप के मूल अपराध के लिए दोषसिद्धि को केवल तभी रद्द किया जा सकता है जब अभियुक्त यह दर्शित करता है कि उसके साथ पक्षपात हुआ है जिससे "न्याय की विफलता" हुई है - विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय के समक्ष कभी भी ऐसी कोई दलील नहीं दी गई थी, अभियुक्त के प्रति पक्षपात होने या न्याय की विफलता होना भी प्रकट नहीं हुआ - इसके अतिरिक्त आरोप पत्र में सारतः स्पष्ट रूप से प्रकट हुआ है कि सह-अभियुक्त के साथ पीड़ित की हत्या करने के सामान्य आशय में अभियुक्त की सहभागिता रही है और सह-अभियुक्त द्वारा समान आधारों पर प्रस्तुत अपील को निरस्त कर दिया गया। इस तरह, उच्च न्यायालय द्वारा धारा 302/34 के अंतर्गत अभियुक्त की दोषसिद्धि को स्थिर रखते हुए पारित आदेश में हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है - धारा 302/34 भा.द.सं.

अपील खारिज करते हुए न्यायालय ने अभिर्निर्धारित किया है कि **-**

1.1 धारा **464** द.प्र.सं**.** आरोप निर्धारण में चूक**,** आरोप का अभाव**,** या आरोप में त्रुटि के प्रभाव से संबंधित है। इसकी उपधारा **(1)** में प्रावधान है कि सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय का कोई भी निष्कर्ष**,** दंडादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया या इस आधार पर कि आरोप में कोई त्रुटि**,** लोप या अनियमितता थी**,** जिसके अंतर्गत आरोपों का कुसंयोजन भी है**,** उस दशा में ही अविधिमान्य समझा जायेगा जब कि अपील**,** पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में इसके कारण वस्तुतः न्याय की विफलता हुई हो। आरोप का अभाव दोषसिद्धि को केवल तभी दुषित करेगा जबकि इससे अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हो और ऐसा वास्तव में हुआ हो। **[**कंडिका **10,11][1098-**एफ**-**जी**; 1099-**बी**]**

1.2 अपीलार्थी के विरूद्ध धारा **302** सहपठित धारा **34** के अंतर्गत आरोप विरचित नहीं किया गया था**,** लेकिन अभियुक्त द्वारा यह साबित किया जाना चाहिए कि आरोप विरचित करने में लोप**,** न्याय की विफलता का कारण बनी है। यद्यपि धारा **302/34** के अंतर्गत आरोप विशिष्टतः विरचित नहीं किया गया था**,** किन्तु

अपीलार्थी**/**अभियुक्त के विरूद्ध दायर आरोप पत्र का सार स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अभियुक्त पर धारा **302/34** के अंतर्गत अपराध का आरोप लगाया गया है। विरचित आरोपों में**,** भले ही अपीलार्थी और सह**-**अभियुक्तों पर केवल धारा **323/34** के अंतर्गत आरोप लगाए गए थे**,** आरोप पत्र में सारतः यह प्रकट हुआ है कि प्रथम अभियुक्त के साथ पीड़ित की हत्या करने के सामान्य अाशय में उनकी सहभागिता रही है। **[**कंडिका **18] [1104-**एफ**-**जी**; 1105-**ई**]**

1.3 आरोप पत्र दाखिल होने के बाद**,** मामला सत्र न्यायालय को सौंप दिया गया। विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तगण पर धारा **302, 302/34, 323** और **323/34** भा**.**द**.**सं**.** के अंतर्गत आरोप लगाया गया**,** जिस पर उन्होंने दोषी नहीं होने का अभिवाक किया और विचारण का विकल्प चुना। इस प्रकार**,** अपीलार्थी**/**अभियुक्त ने स्पष्ट रूप से समझ लिया है कि उसके विरूद्ध धारा **302** सहपठित धारा **34** भा**.**द**.**सं**.** के अंतर्गत आरोप विरचित किया गया है। यदि वास्तव में**,** अपीलार्थी का यह विचार था कि उसके विरूद्ध धारा **302** सहपठित धारा **34** के अंतर्गत कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है**,** तो उसके द्वारा अपना मामला सत्र न्यायालय में उपार्पित किये जाने के समय आपत्ति उठाना चाहिए था। अपीलार्थी द्वारा विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय में प्रारम्भ में आरोप विरचित न किए जाने पर कोई आपत्ति नहीं उठाई गई है। **[**कंडिका **19] [1105-**एफ**-**जी**]**

1.4 न्यायालय द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया से न तो अपीलार्थी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और न ही वह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों से वंचित हुआ है। उच्च न्यायालय में**,** अपीलार्थी द्वारा इस संबंध में कोई आपत्ति नहीं उठाई गई कि उसके विरूद्ध धारा **302** सहपठित धारा **34** भा**.**द**.**सं**.** के अंतर्गत आरोप विरचित नहीं हुआ था आैर इससे उसके साथ पक्षपात हुआ। दूसरी ओर**,** अपीलार्थी की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने केवल यह तर्क दिया है कि अपीलार्थी को धारा **34** में निहित प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत को लागू करके दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए। इन सभी पहलुओं से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी ने यह स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि उसके विरूद्ध धारा **302** सहपठित धारा **34** के अंतर्गत आरोप लगाया गया है और वह धारा **302** के अंतर्गत लगाये गये आरोप के विरूद्ध हर तरह से अपना बचाव करता रहा है। **[**कंडिका **20, 21] [1106-**डी**,** एफ**]**

1.6 समान परिस्थिति वाले सह**-**अभियुक्त द्वारा की गई अपील इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई है। बिना किसी आरोप के किसी गम्भीर अपराध के लिए दोषसिद्धि को तभी रद्द किया जा सकता है**,** जब अभियुक्त यह दर्शित करता है कि उसके साथ पक्षपात हुआ है और इससे **"**न्याय की विफलता**"** हुई है। विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय के समक्ष कभी भी ऐसा कोई तर्क नहीं किया गया। अभियुक्त के साथ किसी तरह का पक्षपात नहीं हुआ और न ही न्याय की विफलता होना दर्शित है तब आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता दर्शित नहीं है। **[**कंडिका **23][1107-**डी**]**

विली (विलियम) स्लेनी बनाम मध्य प्रदेश राज्य एआईआर **1956** एससी **116**;
गुरबचन सिंह बनाम पंजाब राज्य एआईआर **1957** एससी **623**;
मेन पाल बनाम हरियाणा राज्य **(2010) 10** एससीसी **130**;

दरबारा सिंह बनाम पंजाब राज्य **(2012) 10** एससीसी **476**;
मोहन सिंह बनाम बिहार राज्य **(2011) 9** एससीसी **272** - संदर्भित।

निर्णयज विधि संदर्भ

एआईआर **1956** एससी **116**	कंडिका **11** में संदर्भित
एआईआर **1957** एससी **623**	कंडिका **13** में संदर्भित
(2010) 10 एससीसी **130**	कंडिका **14** में संदर्भित
(2012) 10 एससीसी **476**	कंडिका **15** में संदर्भित
(2011) 9 एससीसी **272**	कंडिका **22** में संदर्भित

दाण्डिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: दाण्डिक अपील क्रमांक 1568/2015

दाण्डिक अपील क्रमांक 1047/1989 में उच्च न्यायालय, इलाहाबाद

द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 28.07.2014

अपीलार्थी की आ◌ेर से श्री अशोक कुमार शर्मा, क्षितिज मुद्गल, सुश्री बंदना सिंह अधिवक्ता.

प्रतिवादी की आ◌ेर से श्री अंकुर प्रकाश, आशुतोष कुमार शर्मा, युधिष्ठिर भारद्वाज, सुश्री

लहिंग एन. अधिवक्ता.

न्यायमूर्ति आर**.** भानुमति द्वारा निर्णय पारित -

1. यह अपील, इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दाण्डिक अपील क्रमांक 1047/1989 में पारित निर्णय दिनांक 28.07.2014 से उदभूत हुई है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा संस्थित अपील को खारिज करते हुए विचारण न्यायालय द्वारा धारा 302 भा.द.सं. और अन्य अपराधों के लिए की गयी उसकी दोषसिद्धि और दिये गये आजीवन कारावास की सजा की पुष्टि की है।

2. मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि दिनांक 03.01.1986 को सुबह लगभग 09.00 बजे, शिकायतकर्ता-बाबू खान (अ.सा.3) जो मृतक अखलाक के मामा हैं, को उनके पिता ने सूचित किया कि उनकी बहन की बेटी परवीन टैंक से पानी लेने गई थी, जहां अभियुक्त राशिद (ए 1) और आदिल (ए 3) ने उसके साथ दुर्व्यवहार किया था, किन्तु अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए उनके द्वारा आगे कोई कार्रवाई नहीं की गई। उसी दिन लगभग 04.00 बजे, जब शिकायतकर्ता/अ.सा.3 अपने भतीजे मृतक अखलाक और आदिल हुसैन (अ.सा.2) के साथ अपनी दुकान की ओर जा रहे थे, तभी अभियुक्त राशिद चाकू, अभियुक्त नासिर (ए 2) हॉकी, अभियुक्त आदिल और अपीलार्थी-कामिल (ए 4) हाथ में डंडा लेकर उनकी ओर आये और अ.सा.1, मृतक अखलाक एवं अ.सा.3 को घेर लिया। इसके उपरांत अपीलार्थी-कामिल ने अ.सा.2 के सिर पर एक डंडा मारा और जब मृतक अखलाक ने अभियुक्त नासिर से हॉकी स्टिक छीनने की कोशिश की, तो अपीलार्थी-कामिल ने भी पीछे से मृतक के सिर पर एक डंडा मारा और जब उसने भागने का प्रयास किया तो अभियुक्त नासिर और आदिल ने मृतक को

पकड़ लिया और उसके बाद अभियुक्त राशिद ने मृतक के सीने में चाकू घोंप दिया, जिससे मृतक सीने में लगे चाकू के साथ जमीन पर गिर गया। अ.सा.3 द्वारा शोर मचाने पर जमाल उद्दीन (अ.सा.1) अन्य लोगों के साथ वहॉ मदद के लिए आए। इसके बाद सभी अभियुक्त भाग गए तब मृतक को अस्पताल ले जाया गया, जहां उसकी मौत हो गई। अन्वेषण पूर्ण होने पर अभियुक्तगण के विरूद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया।

3. अभियुक्तगण के विरूद्ध धारा 302, 302 सहपठित धारा 34, 323 और 323 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरिचत किया गया। अभियुक्तगण को दोषी साबित करने के लिए अभियोजन द्वारा आठ साक्षियों का परीक्षण कराया गया आैर प्रदर्शित कर्इ दस्तावेज प्रस्तुत किये गये।

4. प्रकरण में प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करने के उपरांत विचारण न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 01.05.1989 के द्वारा अभियुक्तगण को निम्नानुसार दोषसिद्ध किया गया -

अभियुक्त	दोषसिद्धि	दण्ड
रशीद (ए 1)	धारा 302 भा.द.सं. धारा 323 सहपिठत धारा 34 भा.द.सं.	आजीवन कारावास एक माह का सश्रम कारावास
नासिर (ए 2)	धारा 302 सहपिठत धारा 34 भा.द.सं. धारा 323 सहपिठत धारा 34 भा.द.सं.	आजीवन कारावास एक माह का सश्रम कारावास
आदिल (ए 3)	धारा 302 सहपिठत धारा 34 भा.द.सं. धारा 323 सहपिठत धारा 34 भा.द.सं.	आजीवन कारावास एक माह का सश्रम कारावास
कामिल (ए 4)	धारा 302 सहपिठत धारा 34 भा.द.सं. धारा 323 भा.द.सं.	आजीवन कारावास एक माह का सश्रम कारावास

5. उक्त निर्णय से व्यथित होकर, अपीलार्थी/अभियुक्त द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील प्रस्तुत किया गया, जिसे उच्च न्यायालय ने निर्णय दिनांक 28.07.2014 के द्वारा खारिज कर दिया। इसके पश्चात अभियुक्त नासिर के द्वारा उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील एसएलपी (क्रिमिनल) क्रमांक 9886/2014 प्रस्तुत की गयी जिसे आदेश दिनांक 22.01.2015 के द्वारा खारिज कर दिया गया।

6. अभियोजन द्वारा प्रत्यक्षदर्शी साक्षी बाबू उर्फ बाबू खान (अ.सा.3), जमालुद्दीन (अ.सा.1) और आदिल (अ.सा.2) के साक्ष्य पर विश्वास किया गया है जिन्होंने अपने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है कि घटना दिनांक 03.01.1986 को शाम 04.00 बजे, अ.सा.3 अपने भतीजे मृतक अखलाक और आदिल हुसैन (अ.सा.2) के साथ जोगीपुरा स्थित अपनी दुकान पर जा रहा था, जब वे लालपुर में मंदिर के पास पहुंचे, तो उन्होंने देखा कि चारों अभियुक्तगण वहॉ खड़े होकर उनका इंतजार कर रहे थे। अ.सा.3 ने आगे बताया है कि उस

समय अभियुक्त राशिद के हाथ में चाकू था जबकि अभियुक्त नासिर और कामिल के हाथ में क्रमशः हॉकी और डंडा था। इसके तुरंत बाद, अपीलार्थी/अभियुक्त कामिल ने आदिल हुसैन (पीडब्लू-2) के सिर पर डंडा मारा। जब मृतक अखलाक ने अभियुक्त नासिर से हॉकी स्टिक छीनने की कोशिश की, तो अपीलार्थी/अभियुक्त कामिल ने पीछे से मृतक अखलाक के सिर पर डंडा मारा। जब मृतक अखलाक ने खुद को बचाने के लिए भागने की कोशिश की, तो अभियुक्त नासिर और आदिल ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिए और उसी समय अपीलार्थी/अभियुक्त कामिल ने आदिल (अ.सा.2) पर डंडा से हमला किया। जब अ.सा.3 ने अपीलार्थी/अभियुक्त कामिल से डंडा छीन लिया और उसी डंडा से हमले का जवाब देने की कोशिश की, तो अभियुक्त राशिद ने मृतक अखलाक की छाती में चाकू घोंप दिया। इस पर, अ.सा.3 मदद के लिए चिल्लाया जिसे सुनकर जमालुद्दीन (अ.सा.1), अफसर अली खान और शमशाद हुसैन जो अ.सा.3 के स्टाल पर चाय ले रहे थे, घटनास्थल की ओर दौड़ पड़े। उन्हें देखकर अभियुक्तगण मौके से भाग गए। इसके बाद, अ.सा.3 ने एक साइकिल-रिक्शा लिया और वह मृतक अखलाक को जिला अस्पताल ले गया। मृतक अखलाक अपने जीवन के लिए संघर्ष कर रहा था क्योंकि चाकू अभी भी उसके दिल में घुसा हुआ था। अ.सा.3 ने अपने साक्ष्य में व्यक्त किया है कि उसने स्वयं ही मृतक के सीने से चाकू निकाला था। अस्पताल में मृतक ने दम तोड़ दिया। अ.सा.3 और आहत चश्मदीद साक्षी आदिल हुसैन (अ.सा.2) और जमालुद्दीन (अ.सा.1) के साक्ष्य विश्वसनीय और सुसंगत हैं।

7. अपीलार्थी का तर्क है कि धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत उसके विरूद्ध आरोप विरचित नहीं किया गया था इसलिए धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत अपीलार्थी/अभियुक्त की दोषसिद्धि स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है। अपीलार्थी का यह भी तर्क है कि धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरिचत न किये जाने से उसके प्रति पक्षपात हुआ है। उसकी आ ेर से यह भी व्यक्त किया गया है कि उक्त प्रश्न एक सारभूत प्रश्न है जिससे अपीलार्थी को किसी भी स्तर पर इसे उठाने की स्वतंत्रता है।

8. प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने धारा 464 द.प्र.सं. पर विश्वास करते हुए व्यक्त किया है कि भले ही आरोप विरचित करने में कोई लोप हुआ हो, यदि इससे "न्याय की विफलता" न हुई हो, तो ए ेसी दोषसिद्धि वैध होगी। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के निर्णय के बारे में बताते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने बताया है कि अपीलार्थी को उसके विरूद्ध धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप लगाये जाने के बारे में अच्छी तरह से पता था आ ैर उसने "अन्यत्र उपस्थिति" का बचाव लिया था। यह भी व्यक्त किया गया है कि यदि आरोप का अभाव रहा हो तब भी अपीलार्थी ने यह साबित नहीं किया है कि वास्तव में "न्याय की विफलता" हुई है जिससे विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय के समवर्ती निष्कर्षों द्वारा अपीलार्थी को धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत दी ग ई दोषसिद्धि में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता।

9. हमने उभयपक्ष के तर्कों पर विचार किया और आक्षेपित निर्णय और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया।

10. धारा 464 द.प्र.सं. आरोप विरचित करने में लोप, आरोप का अभाव, या आरोप में त्रुटि के प्रभाव से संबंधित है। इसकी उपधारा (1) में प्रावधान है कि सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय का कोई भी निष्कर्ष,

दंडादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया या इस आधार पर कि आरोप में कोई त्रुटि, लोप या अनियमितता थी, जिसके अंतर्गत आरोपों का कुसंयोजन भी है, उस दशा में ही अविधिमान्य समझा जायेगा जब कि अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में इसके कारण वस्तुतः न्याय की विफलता हुई हो। आरोप का अभाव दोषसिद्धि को केवल तभी दुषित करेगा जबकि इससे अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हो और ऐसा वास्तव में हुआ हो। धारा 464 द.प्र.सं. निम्नानुसार है:-

"464. आरोप तय करने में लोप**,** या अनुपस्थिति**,** या त्रुटि का प्रभाव **-**

(1) सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय का कोई भी निष्कर्ष, दंडादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया या इस आधार पर कि आरोप में कोई त्रुटि, लोप या अनियमितता थी, जिसके अंतर्गत आरोपों का कुसंयोजन भी है, उस दशा में ही अविधिमान्य समझा जायेगा जब कि अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में इसके कारण वस्तुतः न्याय की विफलता हुई हो।

(2) यदि अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय है कि वास्तव में न्याय की विफलता हुई है, तो वह-

(ए) आरोप विरचित न किये जाने वाली दशा में यह आदेश कर सकता है कि आरोप विरचित किया जाए और आरोप की विरचना के ठीक पश्चात उसी बिन्दु पर विचारण पुनः प्रारंभ किया जाए;

(बी) आरोप में किसी गलती, लोप या अनियमितता वाली दशा में यह निदेश दे सकता है कि किसी ऐसी रीति से, जिसे वह ठीक समझे, विरचित आरोप पर नये सिरे से विचारण किया जाए;

11. आरोप का अभाव दोषसिद्धि को तभी दूषित करेगा यदि इससे अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हो और वास्तव में ऐसा हुआ हो। विली **(**विलियम**)** स्लेनी बनाम मध्य प्रदेश राज्य एआईआर **1956** एससी **116** के मामले में संविधान पीठ द्वारा "अभियुक्त के प्रति कारित पक्षपात" और "न्याय की विफलता" की अवधारणा की निम्नानुसार व्याख्या की है : -

"5. इससे पहले कि हम अपना उत्तर देने के लिए अग्रसर हो और संहिता के प्रावधानों का परीक्षण करें, हम यह देखने के लिए विराम लेंगे कि सभी प्रक्रियात्मक कानूनों की तरह दंड प्रक्रिया संहिता भी एक प्रक्रियात्मक संहिता है जो न्याय के उद्देश्यों को अग्रसर करने के लिए बनाई गई है, न कि अंतहीन तकनीकियों को शामिल कर उन्हें विफल करने के लिए। संहिता का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि अभियुक्त को एक पूर्ण एवं निष्पक्ष विचारण मिल सके जो हमारी सुस्थापित और सुनिर्धारित प्राकृतिक न्याय की धारणाओं के अनुरूप हो।

यदि सक्षम न्यायालय द्वारा अभियुक्त का विचारण किया जाता है, उसे बताया जाता है तथा वह स्पष्ट रूप से उस अपराध की प्रकृति के बारे में समझता है जिसके लिए उसका विचारण किया जा रहा है, यदि उसके विरूद्ध मामले को पूर्णतः और निष्पक्ष रूप से उसे समझाया गया है और उसे अपना बचाव

करने का समुचित अवसर दिया गया है, तब वहॉ विधि का सारभूत अनुपालन होना माना जाएगा और जहॉ तक संहिता द्वारा गलत माने जाने का संबंध है, केवल प्रक्रियात्मक गलितयाँ, विचारण में हुई महत्वहीन त्रुटियॉ और लोप को संहिता द्वारा गलत नहीं माना जाता है और ऐसा विचारण तब तक दूषित नहीं माना जा सकता जब तक अभियुक्त यह न दर्शित कर दे कि उसके साथ सारभूत पक्षपात हुआ है। मोटे तौर पर यही वह मूल सिद्धांत है जिस पर कोड आधारित है. **(**रेखांकित भाग जोड़ा गया**)**

12. संविधान पीठ ने परीक्षण किया कि क्या न्यायालय द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया से अभियुक्तगण के साथ वास्तविक अन्याय हुआ है और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: -

"12. ..... सिवाय इसके कि जहां कुछ इतना महत्वपूर्ण है कि क्षेत्राधिकार की जड़ को काट दिया जाए या जिसे कोई प्राकृतिक न्याय कह सकता है, उसके लिए इतना घृणित हो, मामला पूर्वाग्रह के प्रश्न पर ही हल हो जाता है। कई बार संहिता के प्रावधानों का उल्लंघन इतना स्पष्ट होता है कि वे स्वयं ही बोलते हैं, उदाहरण स्वरूप अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने से इंकार करना, उसे अपना बचाव करने की अनुमति देने से इंकार करना, उसे आरोप की प्रकृति समझाने से इंकार करना आदि। ये प्राकृतिक न्याय की बुनियाद पर आघात करते हैं जिससे इन्हें तुरंत अवैध मानकर खारिज कर दिया जाएगा। यह शायद ही मायने रखता है कि क्या ऐसा इसलिए है क्योंकि पूर्वाग्रह पेटेंट है या क्योंकि यह प्राकृतिक न्याय की अच्छी तरह से स्थापित धारणाओं के लिए इतना घृणित है कि उस तरह का परीक्षण केवल एक परीक्षण का मजाक है और हमारे देश के कानूनों द्वारा परिकल्पित प्रकार का नहीं है इसीलिए तुरन्त ही उसे खारिज किया जायेगा। अन्य उल्लंघन इतने स्पष्ट एवं महत्वपूर्ण नहीं होंगे और यह दिखाना संभव हो सकता है कि जो कुछ भी हुआ, उसे ध्यान में रखते हुए कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न नहीं हुआ या पूर्वाग्रह की कोई उचित संभावना नहीं थी। मामले की एक अन्य श्रेणी में, मामला सीमा रेखा के इतना करीब हो सकता है कि पूर्वाग्रह की उचित संभावना का बहुत मामूली सबूत भी अभियुक्त के पक्ष में संतुलन बना देगा।

43. ..... प्रत्येक उचित उपधारणा अभियुक्त के पक्ष में की जानी चाहिए; उसे हर उचित संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए। दोषसिद्धि के निर्धारण के दौरान पक्षपात के मामले पर विचार करते समय न्याय के इसी उदार और निष्पक्ष सिद्धान्त को ध्यान में रखा जाना चाहिए। लेकिन जब सब कुछ कहा और किया जा चुका हो तो हमें यह देखना होता है कि क्या अभियुक्त का निष्पक्ष विचारण हुआ, क्या वह जानता था कि उसके विरूद्ध क्या मुकदमा चलाया जा रहा था, क्या उसके विरूद्ध साबित किए जाने वाले मुख्य तथ्यों को उसे निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से समझाया गया था और क्या उसे अपना बचाव करने का पूरा और निष्पक्ष मौका दिया गया था। यदि ये सभी तत्व मौजूद हैं और कोई पक्षपात होना दर्शित नहीं है, तो जो भी अनियमितताएं हो, चाहे वह आरोप से जुड़ी हो या किसी अन्य कमी से दोषसिद्धि निश्चित रूप से कायम रहनी चाहिए।"

13. ''विली स्लेनी के मामले'' में संविधान पीठ द्वारा दिये गये अभिमत का अनुसरण करते हुए इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने गुरबचन सिंह बनाम पंजाब राज्य**,** एआईआर **1957** एससी **623** के मामले में यह प्रतपादित किया कि न्यायालय को तकनीकी बातों पर नहीं, बल्कि सार पर गौर करना चाहिए और यह अभिनिर्धारित किया कि:-

> “7. .... पूर्वाग्रह के किसी प्रश्न को दोष के रूप में देखते समय, न्यायालयों को व्यापक दृष्टिकोण के साथ काम करना चाहिए और सार को देखना चाहिए, न कि तकनीकी बातों को, और उनकी मुख्य चिंता यह होनी चाहिए कि क्या अभियुक्त की निष्पक्ष सुनवाई हुई, क्या वह जानता था कि उसके विरूद्ध किसलिए मुकदमा चलाया जा रहा है, क्या उसके विरूद्ध स्थापित किए जाने वाले मुख्य तथ्यों को उसे निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से समझाया गया था और क्या उसे खुद का बचाव करने का पूरा और उचित मौका दिया गया था..."

14. "न्याय की विफलता" अभिव्यक्ति के अर्थ पर विचार करने के बाद और विली स्लेनी और गुरबचन सिंह के मामले में संविधान पीठ के अभिमत का उल्लेख करते हुए इस न्यायालय ने मेन पाल बनाम हरियाणा राज्य **(2010) 10** एससीसी **130** में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है कि: -

> 15. शमनसाहेब एम. मुल्तानी बनाम कर्नाटक राज्य (2001) 2 एससीसी 577 के मामले में इस न्यायालय ने धारा 464 द.प्र.सं. में होने वाली अभिव्यक्ति "न्याय की विफलता" के अर्थ पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया था कि: -
>
> “.....
>
> 22. ... आरोप में कोई चूक या अनियमितता होने पर भी दोषसिद्धि वैध होगी, बशर्ते इससे न्याय की विफलता न हो।
>
> 23. ...दाण्डिक न्यायालय, विशेष रूप से वरिष्ठ न्यायालय को यह सुनिश्चित करने के लिए सूक्ष्मता से जांच करनी चाहिए कि क्या वास्तव में न्याय की विफलता हुई थी या यह केवल एक छद्म आवरण है।
>
> ....."

16. उपरोक्त सिद्धांतों को इस न्यायालय के कई निर्णयों में दोहराया गया है, जिनमें पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य बनाम लाइसल हक एवं अन्य (1989) 3 एससीसी 166, आंध्र प्रदेश राज्य बनाम थक्कीदिराम रेड्डी एवं अन्य (1998) 6 एससीसी 554, दलबीर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2004) 5 एससीसी 334, डम्पला चंद्र रेड्डी बनाम निमाकायला बलिरेड्डी और अन्य (2008) 8 एससीसी 339 और सनीचर साहनी बनाम बिहार राज्य (2009) 7 एससीसी 198 शामिल हैं।

17. उपरोक्त अभिमत से संहिता की धारा 212, 215 और 464 से संबंधित निम्नलिखित सिद्धांत जो इस मामले से सुसंगत है, स्पष्ट होते हैं:-

(i) आरोप तय करने का उद्देश्य अभियुक्त को यह स्पष्ट जानकारी देना है कि उस पर किस लिए मुकदमा चलाया जा रहा है और उसे किन आवश्यक तथ्यों का पालन करना है। आरोप में तारीख, समय, स्थान और उस व्यक्ति का विवरण भी शामिल होना चाहिए जिसके खिलाफ अपराध किया गया था, जो अभियुक्त को उस मामले की सूचना देने के लिए उचित रूप से पर्याप्त है जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है।

(ii) अभियुक्त निश्चितता और सटीकता के साथ अपने विरूद्ध लगाए गए आरोप की सटीक प्रकृति को जानने का हकदार है, और जब तक उसे ऐसा ज्ञान नहीं होगा, उसका बचाव पूर्वाग्रहपूर्ण होगा। जहां एक अभियुक्त पर एक व्यक्ति के विरूद्ध अपराध करने का आरोप लगाया जाता है, लेकिन सबूतों के आधार पर इस संबंध में कोई आरोप तय किए बिना, उसे किसी अन्य व्यक्ति के विरूद्ध अपराध करने के लिए दोषी ठहराया जाता है तो यह अभियुक्त के प्रति पक्षपात होगा, जिसके परिणामस्वरूप न्याय विफल हो जाएगा। लेकिन वहां कोई पक्षपात या न्याय की विफलता नहीं होगी जहां आरोप में कोई त्रुटि थी और अभियुक्त को त्रुटि के बारे में पता था। इस तरह के ज्ञान का अनुमान बचाव से लगाया जा सकता है, अर्थात, यदि अभियुक्त के बचाव से पता चलता है कि वह वास्तविक और सही आरोप के विरूद्ध अपना बचाव कर रहा था, न कि गलत आरोप के विरूद्ध।

(iii) पक्षपात के किसी प्रश्न को दोष के रूप में देखते समय, न्यायालयों को व्यापक दृष्टिकोण के साथ काम करना चाहिए और सार को देखना चाहिए न कि तकनीकी बातों को और उनकी मुख्य चिंता यह होनी चाहिए कि क्या अभियुक्त का निष्पक्ष विचारण हुआ था। क्या वह जानता था कि उस पर किस लिए मुकदमा चलाया जा रहा है, क्या उसके विरूद्ध साबित किए जाने वाले मुख्य तथ्यों को उसे निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से समझाया गया था, और क्या उसे खुद का बचाव करने का पूर्ण और निष्पक्ष मौका दिया गया था। (रेखांकित भाग जोड़ा गया)

15. दरबारा सिंह बनाम पंजाब राज्य (2012) 10 एससीसी 476 के मामले में इस न्यायालय ने इसी तरह के मुद्दे पर विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभियुक्त को अदालत को संतुष्ट करना होगा कि आरोप विरचित करने में कोई दोष है जिससे अभियुक्त के साथ पक्षपात हुआ है जिसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। केवल उस स्थिति में ही न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है। इस मामले में न्यायालय ने निम्नानुसार विधि प्रतिपादित किया:-

"20. आरोप तय करने में हुई त्रुटि इतनी गंभीर होनी चाहिए जो धारा 464/465 द.प्र.सं. की परिधि में न आती हो, जो प्रावधान करता है कि सजा या दोषसिद्धि का आदेश केवल इस आधार पर अमान्य नहीं माना जाएगा कि कोई आरोप नहीं लगाया गया था, या आरोप विरचना में कोई अनियमितता या लोप या कुसंयोजन हुआ था, जब तक कि न्यायालय इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचती है कि ऐसे त्रुटि के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता भी हुई। यह निर्धारित करने में कि क्या सुसंगत आरोपों को तय करने में किसी त्रुटि, लोप या अनियमितता के कारण न्याय में विफलता हुई है, न्यायालय को इस बात पर भी

ध्यान देना चाहिए कि कार्यवाही के दौरान प्रथम चरण में एेसी आपत्ति उठाई जा सकती थी या नहीं। पक्षपात या दोष के सवाल पर निर्णय करते समय, न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्रत्येक अभियुक्त को निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार है, उसे पता होना चाहिए कि उसके विरूद्ध मुकदमा क्यों चलाया जा रहा है, उसके विरूद्ध साबित किए जाने वाले तथ्यों को उसे निष्पक्ष और स्पष्ट रूप से समझा दिया गया है, और उसे उक्त आरोप(आरोपों) के विरूद्ध खुद का बचाव करने का पूर्ण और उचित मौका दिया गया है।

21. 'न्याय की विफलता' एक बेहद लचीली या आसान अभिव्यक्ति है, जिसे किसी भी मामले में किसी भी स्थिति में फिट किया जा सकता है। अदालत को सच्चाई का पता लगाने का प्रयास करना चाहिए। न केवल अन्यायपूर्ण दोषसिद्धि से, बल्कि अपेक्षित साक्ष्य प्रस्तुत करने में अन्यायपूर्ण विफलता के परिणामस्वरूप, दोषियों को बरी कर दिये जाने से भी 'न्याय की विफलता' होगी। बेशक, अभियुक्तों के अधिकारों को ध्यान में रखा जाना चाहिए और उनकी रक्षा भी की जानी चाहिए, लेकिन उन्हें इस हद तक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए कि यह विस्मृत हो जाए कि पीड़ितों के भी अधिकार हैं। यह देखने में आया है कि अभियुक्त को भारतीय आपराधिक न्यायशास्त्र के अंतर्गत उपलब्ध सुरक्षा के संबंध में कुछ कमी या हानि का सामना करना पड़ा है। 'पूर्वाग्रह' शब्द की उदारतापूर्वक व्याख्या किये जाने और आपराधिक न्यायशास्त्र में लागू किये जाने में असमर्थता रही है। पूर्वाग्रह की दलील जांच या मुकदमे के संबंध में होनी चाहिए, न कि उनके दायरे से बाहर आने वाले मामलों के संबंध में। एक बार जब अभियुक्त यह दर्शित करने में सफल हो जाता है कि इन दोनों पहलुओं के संबंध में उसके साथ गंभीर पक्षपात हुआ है, और इसने आपराधिक न्यायशास्त्र के तहत उसे उपलब्ध अधिकारों को नष्ट कर दिया है, तो अभियुक्त न्यायालयीन आदेशों के द्वारा लाभ प्राप्त कर सकता है। (रफीक अहमद उर्फ रफी बनाम उ.प्र. राज्य (2011) 8 एससीसी 300, एससीसी पृष्ठ 320, कंडिका 36; रत्तीरमंद एवं अन्य बनाम म.प्र. राज्य द्वारा पुलिस निरीक्षक (2012) 4 एससीसी 516 और भीमन्ना बनाम कर्नाटक राज्य (2012) 9 एससीसी 650)" (रेखांकित भाग जोड़ा गया)

16. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या आरोप विरचित न होने से वर्तमान मामले में पक्षपात हुआ है। यह तय करने के लिए कि क्या न्याय में विफलता हुई है, यह परीक्षण करना सुसंगत होगा कि क्या अभियुक्त को उस अपराध के मूल तत्वों के बारे में पता था जिसके लिए उसे दोषी ठहराया जा रहा है और क्या उसे इस बारे में समझाया गया था और क्या उसे बचाव करने के लिए उचित अवसर मिला था। मुद्दे का सार यह है कि क्या इस मामले में, धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित करने में चूक ने अपीलार्थी/अभियुक्त की दोषसिद्धि को दूषित कर दिया है।

17. प्रकरण में अभियुक्त के विरूद्ध विरिचत किये गये आरोप इस प्रकार हैं:-

"आरोप

मैं, सी.पी. सिंह, विशेष न्यायाधीश (ई.सी. एक्ट), बदायूँ आप पर आरोप लगाता हूँ कि -

1. आप नासिर पुत्र वली मोहम्मद निवासी ऊपर पारा थाना कोतवाली, बदायूँ

2. आदिल निवासी

3. कामिल पुत्र बन्नी

प्रथम:- यह कि आप रशीद दिनांक 03.01.1986 को सायं लगभग 04.00 बजे मोहल्ला ऊपर पारा निकट लालपुल बदायूँ, थाना कोतवाली बदायूँ ने अखलाक तथा उसके बचाव में आए किसी भी अन्य व्यक्ति पर जानलेवा हमला करने का सामान्य आशय निर्मित किया और उक्त सामान्य आशय के अग्रसरण में अभियुक्त राशिद ने जानबूझकर उपरोक्त अखलाक की साशय मृत्यु कारित करते हुए हत्या की। इस तरह आपने भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 के अंतर्गत दंडनीय अपराध किया जो मेरे संज्ञान में है।

द्वितीय:- यह कि आप आदिल ने उपरोक्त तिथि, समय और स्थान पर आदिल को स्वेच्छया उपहति कारित किया। इस तरह आपने भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अंतर्गत दंडनीय अपराध कारित किया जो मेरे संज्ञान में है।

तृतीय:- आप कामिल एवं नासिर ने उपरोक्त तिथि, समय और स्थान पर राशिद और आदिल के साथ मिलकर आदिल और किसी अन्य को चोट पहुंचाने का सामान्य आशय निर्मित किया और उक्त सामान्य आशय के अग्रसरण में आदिल ने आदिल को स्वेच्छया उपहति कारित किया। इस तरह आपने भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34 के अंतर्गत दंडनीय अपराध कारित किया जो मेरे संज्ञान में है।

मैं एतदद्वारा निर्देश देता हूं कि उक्त आरोपों के संबंध में इस न्यायालय द्वारा आपका विचारण किया जाए।

(सी.पी. सिंह)

अतिरिक्त. जिला न्यायाधीश,

विशेष न्यायाधीश (ई.सी. अधिनियम),

बदायूँ 18.09.1986"

18. जैसा कि उपरोक्तानुसार दर्शित है कि अपीलार्थी के विरूद्ध धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित नहीं किया गया था। लेकिन यह अभियुक्त को साबित करना है कि आरोप विरचित करने में चूक न्याय की विफलता का कारण बनी है। यद्यपि धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत विशिष्ट आरोप विरचित नहीं किया गया था, किन्तु अपीलार्थी/अभियुक्त के विरूद्ध प्रस्तुत आरोप पत्र का सार स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अभियुक्त पर धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत अपराध के लिए आरोप लगाया गया है जो कि निम्नानुसार है :-

"महोदय,

दिनांक 03.01.1986 को फरियादी ने थाना कोतवाली आकर मौखिक रूप से बताया कि उसकी भतीजी नल से पानी लेने गयी थी। अभियुक्त उसे छेड़ते थे लेकिन समाज में इज़्ज़त के भय से उन्होंने इसे मुद्दा नहीं बनाया किन्तु, उस समय तीव्र विवाद हुआ। उन्होंने अपनी भतीजी को शांत कराया। मैं, आदिल और अखलाक के साथ आज शाम लगभग 04.00 बजे जोगीपुरा स्थित अपनी दुकान पर जा रहा था, जब हम लालपुर मंदिर के पास पहुंचे तो कॉलम नंबर 2 और 3 में उल्लेखित अभियुक्त वहां मौजूद थे। कामिल के हाथ में डंडा, नासिर के हाथ में हॉकी और राशिद के हाथ में चाकू था। उन्होंने हमें घेर लिया। उन्होंने मेरे भतीजे आदिल के साथ दुर्व्यवहार किया। आदिल ने गाली देने का विरोध किया और कहा कि अगर तुमने गाली दिया तो अच्छा नहीं होगा। इस पर अभियुक्त ने मेरे भतीजे को डंडे से मारा। मैंने अपने भतीजे को बचाने के लिए कामिल से डंडा छीन लिया, तब अभियुक्त नासिर और आदिल ने मेरे भतीजे को पकड़ लिया और राशिद ने उसके सीने में चाकू घोंप दिया। मेरा भतीजा जमीन पर गिर गया और उसकी हालत बिगड़ने लगी। मैं उसे अस्पताल ले गया जहाँ उसकी मृत्यु हो गई। इस सूचना के आधार पर अपराध क्रमांक 2/86 अंतर्गत धारा 302/323/34 भा.द.सं. दर्ज किया गया। अभियुक्त राशिद व अन्य को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। अभियुक्त कामिल नहीं मिला जिससे उसके विरूद्ध अन्वेषण जारी रखा गया। इन अभियुक्तगण के विरूद्ध धारा 302/323/34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया है। दिनांक 13.01.1986।"

विरचित आरोपों में भले ही अपीलार्थी और अभियुक्त नासिर पर धारा 323 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत ही आरोप लगाए गए हों, लेकिन आरोप पत्र का सार स्पष्ट रूप से अभियुक्त राशिद के साथ अखलाक की हत्या करने के सामान्य आशय में उसकी सहभागिता को प्रकट करता है।

19. यह ध्यान रखना आवश्यक है कि आरोप पत्र दाखिल होने के बाद, मामला सत्र न्यायालय को सौंप दिया गया था। विचारण न्यायालय ने इंगित किया है कि अभियुक्तगण पर धारा 302, 302/34, 323 और 323/34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप लगाए गए थे, जिसमें उन्होंने दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया था और विचारण का विकल्प चुना। इस तरह अपीलार्थी/अभियुक्त ने स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि उसके विरूद्ध धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित किया गया था। यदि वास्तव में, अपीलार्थी को यह विश्वास था कि उसके विरूद्ध धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत कोई आरोप विरचित नहीं किया गया है, तो अपीलार्थी को सत्र न्यायालय में उपार्पण के समय आपत्ति उठाना चाहिये था। यह भी उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी ने प्रारम्भिक अवसर पर विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय - उच्च न्यायालय में आरोप विरचित नहीं किए जाने के बिन्दु पर कोई आपत्ति नहीं उठाई है।

20. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया है कि धारा 313 द.प्र.सं. के अंतर्गत परीक्षण के दौरान भी अपीलार्थी के सामान्य आशय में सहभागिता के संबंध में उससे सुसंगत प्रश्न नहीं पूछा गया है। उपरोक्त तर्क में कोई गुणवत्ता नहीं होने से स्वीकार्य नहीं है जैसा कि निम्नानुसार दर्शित है:-

"प्र.4 साक्ष्य में आया है कि दिनांक 03.01.1986 को शाम लगभग 04.00 बजे लाल पुल मंदिर के पास, आपने आरोप लगाया कि कामिल और नासिर डंडा और हॉकी लेकर आए थे, जिससे आदिल (साक्षी का भतीजा) आहत हो गया। आपने अभियुक्त नासिर तथा आदिल ने अखलाक को पकड़ लिया तथा अभियुक्त कामिल के कहने पर आप अभियुक्त राशिद ने अखलाक की छाती में चाकू घोंपकर हत्या कर दी। आप इसके बारे में क्या कहते हैं?

उत्तर. यह गलत है।"

प्रश्न क्रमांक 5 सूचनाकर्ता बाबू द्वारा शिकायत दर्ज कराने से संबंधित है। प्रश्न क्रमांक 10 अपीलार्थी और अन्य अभियुक्तगण के विरूद्ध आरोप पत्र दाखिल करने से संबंधित है। जैसा कि ऊपर कंडिका (14) में वर्णित है। आरोप पत्र का सार स्पष्ट रूप से अपीलार्थी/अभियुक्त द्वारा सामान्य आशय में उसकी सहभागिता प्रकट करता है। हमारे विचार में, इस मामले में न्यायालय द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया ने न तो अपीलार्थी पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है और न ही उसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों से वंचित किया है।

21. यह भी उल्लेखनीय है कि उच्च न्यायालय में, अपीलार्थी ने इस बारे में कोई आपत्ति नहीं की है कि उसके विरूद्ध धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित नहीं किया गया है जिससे उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। दूसरी ओर, अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने केवल यह तर्क किया है कि अपीलार्थी कामिल को भा.द.सं. की धारा 34 में निहित प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के आधार पर दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए था। इन सभी पहलुओं से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि उसके खिलाफ धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित किया गया है और पूरे समय वह केवल धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप के विरूद्ध स्वयं का बचाव करता रहा है। उपरोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि उसके साथ न्याय की विफलता हुई है और धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप के अभाव के कारण उसके प्रति कोई पक्षपात हुआ है।

22. मोहन सिंह बनाम बिहार राज्य (2011) 9 एससीसी 272 के मामले में जहां अपीलार्थीओं ने पहली बार सुप्रीम कोर्ट के समक्ष आरोप तय करने में हुई त्रुटियों के संबंध में मुद्दे उठाए थे, इस न्यायालय ने यह अभिमत दिया था कि: -

"14. ऐसे मामले में जहां आरोप तय करने में हुई त्रुटियों अथवा यहां तक कि आरोप के कुसंयोजन से संबंधित बिंदु पहली बार इस न्यायालय के समक्ष उठाए जाते हैं, ऐसे बिन्दुओं पर सामान्यतया इस न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया जाता है। इस संबंध में मंगल सिंह और अन्य बनाम मध्य भारत राज्य एआईआर 1957 एससी 199 के मामले में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ के फैसले का संदर्भ दिया जा सकता है। न्यायमूर्ति इमाम द्वारा इस न्यायालय की सर्वसम्मति से दिये गये अभिमत को कंडिका क्र.5 पृष्ठ क्र.201 में निम्नानुसार प्रतिपादित किया गया है:-

> "5. यद्यपि, यह तर्क किया गया है कि आरोपों में कुसंयोजन है। किन्तु ऐसा दर्शित नहीं होता है कि इस बिंदु को उच्च न्यायालय के समक्ष भी उठाया गया है क्योंकि उच्च न्यायालय के निर्णय में इसका कोई उल्लेख नहीं है। यह भी दर्शित नहीं है कि विशेष अनुमति के लिए प्रस्तुत याचिका में भी इसका उल्लेख किया गया हो। इसलिए, अपीलार्थीगण को इस स्तर पर यह प्रश्न उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।"

23. यह बताना भी प्रासंगिक है कि समान स्थिति वाले सह-अभियुक्त नासिर द्वारा की गई अपील को इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है। बिना किसी आरोप के किसी ठोस अपराध के लिए दोषसिद्धि को तभी रद्द किया जा सकता है, जब अभियुक्त यह दर्शाता है कि उसके साथ पक्षपात हुआ है और इससे "न्याय की विफलता" हुई है। विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई तर्क कभी नहीं दिया गया। जैसा कि ऊपर वर्णित है, हमारे मत में अभियुक्त के प्रति कोई पक्षपात नहीं हुआ है और न ही न्याय की विफलता होना दर्शित है, तब आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप की आवश्यकता दर्शित नहीं होती।

24. परिणामस्वरूप, अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज.

जी.सी.मिश्रा